एग्री आर्टिकल्स
(कृषि लेखों के लिए ई-पत्रिका)
वर्ष: 06, अंक: 03 (मई-जून, 2026)
www.agriarticles.com पर ऑनलाइन उपलब्ध
© एग्री आर्टिकल्स, आई. एस. एस. एन.: 2582-9882

जूट की खेती

डॉ. सत्य पाल सिंह[1] एवं *डॉ. राम भरोसे[2]
[1]वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, [2]विषय वस्तु विशेषज्ञ (मृदा विज्ञान)
(कृषि विज्ञान केन्द्र, श्रावस्ती, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या)
*संवादी लेखक का ईमेल पता: rbharose1@gmail.com

जूट की खेती दुनियाँ की लगभग 85 प्रतिशत जूट की खेती जलवायु मौसम और मिट्टी पर निर्भर करती है। जूट की खेती मुख्यतः गंगा डेल्टा के मैदानी इलाकों में की जाती है। भौगोलिक दृष्टि से देखें तो यह भारत के पश्चिम बंगाल और बांग्लादेश के उपजाऊ भूमि पर की जाती है। भारत के अलावा ये नेपाल, भूटान, म्यांमार, चीन और पाकिस्तान में भी जूट की खेती की जाती है। जूट एक द्विबीजपत्री, रेशेदार पौधा है। इसका तना पतला और बेलनाकार होता है। इसके रेशे बोरे, दरी, तम्बू, तिरपाल, टाट, रस्सियाँ, निम्नकोटि के कपड़े तथा कागज बनाने के काम आता है जूट की खेती नकदी खेती कहलाती है। इससे लोगों को नकद पैसा हासिल होता है भारत के बंगाल, बिहार, उड़ीसा, असम और उत्तर प्रदेश के कुछ तराई भागों में लगभग 16 लाख एकड़ भूमि में जूट की खेती होती है। इससे लगभग 38 लाख गाँठ (एक गाँठ का भार 400 पाउंड) जूट पैदा होता है। उत्पादन का लगभग 67 प्रतिशत भारत में ही खपता है। 7 प्रतिशत किसानों के पास रह जाता है और शेष ब्रिटेन, बेल्जियम जर्मनी, फ्रांस, इटली और संयुक्त राज्य, अमरीका, को निर्यात होता है। भारत विश्व जूट उत्पादन का लगभग 56 प्रतिशत उत्पादन करता है, जबकि बांग्लादेश 25 प्रतिशत के साथ दूसरे स्थान पर है। यह एक बहुउपयोगी फसल है जो किसानों को अच्छी आमदनी दे रही है। पटुआ का पौधा मुख्य रूप से अपने रेशे के लिए उगाया जाता है, जिसका उपयोग रस्सी, बोरी, चटाई और कपड़े बनाने में होता है। इसके अलावा, पौधे की जड़ और शेष बचे पत्तों का उपयोग पशु चारे और जैविक खाद के रूप में भी किया जाता है, जिससे यह फसल पूरी तरह से मूल्यवान बन जाती है।

मिट्टी का चुनाव

ऐसी भूमि उपयुक्त मानी जाती है जो समतल हो, पानी का निकास अच्छा हो, लेकिन उसमें नमी रोकने की क्षमता भी हो। दोमट और मटियार दोमट भूमि जूट की खेती के लिए सर्वश्रेष्ठ है। जूट की खेती के लिए समतल भूमि के साथ दोमट तथा मटियार दोमट मिट्टी उपयुक्त रहती है। जूट के लिए गर्म और आर्द्र जलवायु सबसे उपयुक्त मानी जाती है।

उन्नत किस्में

- **कैपसुलेरिस–** इसे सफेद जूट भी कहते हैं. इसकी पत्तियां स्वाद में कडुवी होती हैं. इसकी बुवाई फरवरी से मार्च में की जाती है।
- **जे०आर०सी०–321–** यह शीघ्र पकने वाली किस्म है, जो जल्दी वर्षा होने तथा निचली भूमि के लिए सर्वोत्तम है। इसकी बुवाई फरवरी–मार्च में तथा जुलाई में कटाई की जाती है।
- **जे०आर०सी०–212–** मध्य एवं उच्च भूमि में देर से बोई जाने वाली जगहों के लिए उपयुक्त है। बुवाई मार्च से अप्रैल में करके जुलाई के अन्त तक कटाई की जाती है।
- **यू०पी०सी०–94 (रेशमा)–** निचली भूमि के लिए उपयुक्त यह किस्म बुवाई फरवरी के तीसरे सप्ताह से मध्य मार्च तक की जाती है।
- **जे०आर०सी०–698–** बुवाई मार्च के अन्त में की जाने वाली यह किस्म निचली भूमि के लिए उपयुक्त है।
- **अंकित (एन०डी०सी०)–** निचली भूमि के लिए उपयुक्त इस प्रजाति को 15 फरवरी से 15 मार्च तक बुवाई कर सकते हैं।
- **एन०डी०सी०.9102–** पूर्वी उत्तर प्रदेश के लिए इस किस्म की सिफारिस की जाती है।
- **ओलीटोरियस–** इसकी पत्तियां स्वाद में मीठी होती हैं और इसे देव या टोसा जूट भी कहते है। इसका रेशा केपसुलेरिस से अच्छा होता है। उच्च भूमि के लिए उपयुक्त इस किस्म की बुवाई अप्रैल के अन्त से मई तक की जाती है।
- **जे०आर०ओ०–632–** यह देर से बुवाई और ऊची भूमि के लिए सही मानी जाती है. बुवाई अप्रैल से मई के अन्तिम सप्ताह तक की जाती है।

- **जे०आर०ओ०–878–** यह प्रजाति लगभग सभी मिट्टियों के लिए उपयुक्त है. बुवाई मध्य मार्च से मई तक की जाती है। समय से पहले फूल आने हेतु यह किस्म अवरोधी है।
- **जे०आर०ओ०–7835**– यह किस्म अधिक उर्वरा शक्ति ग्रहण करने के कारण अच्छी पैदावार देती है।
- **जे०आर०ओ०–524 (नवीन)–** इसकी बुवाई मार्च तृतीय सप्ताह से अप्रैल तक की जाये तो 120 से 140 दिन में कटाई योग्य हो जाती है।
- **जे०आर०ओ०–66**– यह प्रजाति 100 दिन में अच्छी उपज दे देती है. मई जून में बुवाई होती है.

बुवाई विधि

एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा बाद में 2–3 जुताइयां देशी हल या कल्टीवेटर से करके पाटा लगाकर खेत को भुरभुरा बना देना चाहिए। जूट का बीज बहुत छोटा होता है इसलिए मिट्टी का भुरभुरा होना आवश्यक है। बुवाई हल द्वारा लाइनों से लाइनों का दूरी 30 सेमी० तथा पौधे से पौधे की दूरी 7–8 सेमी० एवं गहराई 2–3 सेमी० करनी चाहिए। सीड ड्रिल से पंक्तियों में बुवाई करने पर कैपसुलेरिस किस्मों के लिए 4–5 किग्रा० तथा ओलिटेरियस प्रकार की जुट के लिए 3–5 किलो बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त रहता है। छिड़कवां विधि से बोने पर 5–6 किलो बीज की आवश्यकता होती है।

खाद एवं उर्वरक प्रबंधन

उर्वरक का प्रयोग मिट्टी परीक्षण के आधार पर किया जाना चाहिए किन्तु नहीं कराने पर कैपसुलेरिस प्रकार की किस्मों के लिए 60 किलोग्राम नत्रजन, 30 किलोग्राम फास्फोरस और 30 किलोग्राम पोटाश देना चाहिए। ओलीटोरियस प्रकार की किस्मों के लिए 40 किलोग्राम नत्रजन, 20 किलोग्राम फास्फोरस और 20 किलोग्राम पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई से पूर्व फसल को देना चाहिए। यदि बुवाई के 15–20 दिन पहले एक टन गोबर की सड़ी खाद या कम्पोस्ट प्रति हेक्टेयर की दर से डाल दी जाए तो पैदावार अच्छी होती है।

सिंचाई प्रबन्धन

कूंड विधि से बुवाई करने पर 30 प्रतिशत जल की बचत होती है। बुवाई के साथ सिंचाई करना आवश्यक है तथा उसके बाद आवश्यकता अनुसार 15–20 दिन बाद सिंचाई करते रहना चाहिए। सिंचाई के 4–5 दिन बाद नेट वीडर का उपयोग खेत में करना चाहिए अधिक समय तक खेत में पानी भरा होना फसल के लिए हानिकारक है अतः उचित जल निकास प्रबंधन करना चाहिए।

खरपतवार प्रबंधन

खरपतवार निराई खेत में बुवाई के 20–25 दिन बाद करनी चाहिए। अतिरिक्त सघन पौधे हटाकर पौधे से पौधे की दूरी 6–8 सेमी कर देना चाहिए. खरपतवार का नियंत्रण खरपतवार नाशी रसायनों से भी किया जा सकता है। पौध उगने से पहले पेन्डीमेथिलीन 30 प्रतिशत ईसी ई०सी० 1.0 लीटर अथवा फ्लूक्लोरोलिन 600 से 800 ग्राम प्रति एकड़ 200 लीटर पानी के साथ घोलकर छिड़काव कर देना चाहिए। खड़ी फसल में खरपतवार नियंत्रण हेतु 30–35 दिन के अन्दर क्यूनालफास इथाइल 5 प्रतिशत 400 मिली प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करना प्रभावी होता है।

पौध संरक्षण

जड़ तथा तना सड़न रोग– जूट की फसल इस रोग से ग्रसित हो सकती है, जिससे कभी–कभी फसल पूर्णतः नष्ट हो जाती है. इससे बचाव के लिए बीज को उपचरित करके ही बोना चाहिए। बीज उपचार के लिए कार्बेण्डजीम 12 प्रतिशत + मेंकोजेब 63 प्रतिशत डबल्यूपी दवा की 2.5 ग्राम मात्रा प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। जैविक उपचार के लिए ट्राइकोडर्मा विरिडी 10 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित तथा अन्तिम जुटाई के समय 1.0 किलो ट्राइकोडरमा विरिडी को 25 किलो गोबर की सड़ी खाद में मिलाकर प्रयोग करना चाहिए। जूट फसल पर सेमीलूपर कीटों का प्रकोप होता है। इन कीटों के रोकथाम हेतु 600 मिली डाइकोफाल 18.5 प्रतिशत ईसी को 200 लीटर पानी में मिलकर प्रति एकड़ फसल में छिड़काव करना चाहिए।

कटाई और पौधों को गलाना

100 से 120 दिन की फसल हो जाने पर उत्तम रेशा प्राप्त करने के लिए कटाई की जाती है। जल्दी कटाई करने पर प्रायः रेशे की उपज कम प्राप्त होती है। लेकिन देर से काटी जाने वाली फसल में रेशा अच्छा होता है। छोटे तथा पतले पौधों को छांटकर अलग–अलग छोटे–छोटे बंडलों में बांधकर दो तीन दिन तक खेत में पत्तियों के गिरने हेतु छोड़ दिया जाता है। कटे हुए पौधों के बन्डलों को 2–3 दिन पानी में 10–15 सेमी० गहराई तक रखना चाहिए। उसके बाद किसी वजनी पत्थर के टुकड़े से दबा देना चाहिए, साथ ही इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि बन्डल तालाब की निचली सतह से न छूने पाये। सामान्य स्थिति होने पर 15–20 दिन में रेश निकलने शुरू हो जाते है।

रेशा निकालना एवं सुखाना

प्रत्येक पौधों के रेशों को अलग–अलग निकालकर हल्के बहते हुए साफ पानी में अच्छी तरह धोकर किसी तार, बांस इत्यादि पर लटकाकर कड़ी धूप में 3–4 दिन तक सुखा दिया जाता है। सुखाने की अवधि में रेशे को उलटते–पलटते रहना चाहिए. सघन विधि द्वारा रेशे की उपज प्राप्त की जा सकती है।